महाकवि भारविप्रणीत

किरातार्जुनीयम् विश्लेषणम्

प्रश्न १—संस्कृतसाहित्य के महाकाव्यकारों में भारवि के स्थान एवं महत्त्व पर विवेचन प्रस्तुत कीजिए ?

उत्तर—संस्कृतकाव्यकारों में समीक्षात्मक एवम् ऐतिहासिक दृष्टि से भारवि प्रथम स्थान है। संस्कृत साहित्य की उत्कृष्टता के आधार पर (१) लघुत्रयी और (२) बृहत्त्रयी नामक दो त्रयी प्रसिद्ध हैं। लघुत्रयी के अन्तर्गत कालिदास की तीन रचनाएँ (१) रघुवंश महाकाव्य, (२) कुमारसम्भव महाकाव्य और (३) मेघदूत (खण्डकाव्य) मानी जाती हैं। बृहत्त्रयी के अन्तर्गत भारवि कृत (१) किरातार्जुनीय, माघ का (२) शिशुपालवध, और श्रीहर्ष कृत (३) नैषधीय चरित की गणना की जाती है। बृहत्त्रयी में भी भारवि को प्रमुख स्थान दिया जाता है। भारवि से पूर्व संस्कृत-काव्यों में भावपक्ष प्रधान रचनाएँ की जाती थीं। भारवि ने सर्वप्रथम कलापक्ष को प्रधानता प्रदान की और भावाभिव्यञ्जना के साथ-साथ कलापक्ष का सौन्दर्य काव्य-क्षेत्र में स्थापित किया।

काव्य के भाव और कला ये दो पक्ष माने जाते हैं। भारवि के मतानुसार कविता कामिनी के लिये भावात्मक सौन्दर्य ही पर्याप्त नहीं है प्रत्युत उपमा, उत्प्रेक्षा, श्लेष और अनुप्रास आदि अलंकारों से अलंकृत करके प्रस्तुत करना अत्यावश्यक है। किरातार्जुनीय में भारवि की इस रुचि का पर्याप्त दर्शन प्राप्त होता है। यही कारण है कि भारवि की रचना में एक ओर भावाभिव्यक्ति की सुन्दर अभिव्यञ्जना प्राप्त होती है—तो दूसरी ओर अर्थ गौरव एवम् अर्थ गाम्भीर्य के साथ-साथ आकर्षक एवं रमणीय अलंकारों की विलक्षणता अद्भुत चमत्कार उत्पन्न कर रही है।

कतिपय समीक्षकों ने भारवि को कृत्रिम काव्य-शैली का जन्मदाता कहा है और उनके चित्रकाव्य की भर्त्सना भी की है। भारवि कालिदास की काव्य-कला के उत्तराधिकारी महाकवि हैं। फिर भी भारवि ने कालिदास की मार्मिक भावाभिव्यक्ति पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया। इसके अतिरिक्त कतिपय समीक्षकों

ने यह भी कहा है कि भारवि की काव्यकला स्वाभाविकता से दूर कृत्रिमता के अधिक सन्निकट पहुँच गई है। यहाँ तक कि कुछ समीक्षकों ने यह भी भाव व्यक्त किया है कि भारवि की काव्यकला संस्कृत साहित्य में ह्रास का युग प्रारम्भ करती है। जो उत्तरोत्तर ह्रास की ओर प्रेरित करती है। भारवि की काव्य रचना में भाव सौन्दर्य की अपेक्षा पाण्डित्य प्रदर्शन की मात्रा अधिक परिलक्षित होती है।

वस्तुतः उपर्युक्त कथन उचित नहीं प्रतीत होता है क्योंकि (१) भारवि की काव्यकला में जो अर्थगौरव की गरिमा, (२) पदों की सुन्दर एवम् आकर्षक योजना और (३) अलंकारों का चमत्कार पूर्ण चित्रण, दृष्टिगोचर होता है। ये सभी विशेषताएँ अन्य किसी एक महाकवि की रचना में एक साथ प्राप्त होना दुर्लभ नहीं तो कठिन अवश्य है। किरातार्जुनीय की समीक्षा करने पर यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि भारवि राजनीति के प्रकाण्ड विद्वान् एवं महाकवि हैं।

भारवि विविध विषयों तथा शास्त्रों के मर्मज्ञ विद्वान् मानवीय रुचि के महान् मनोवैज्ञानिक विद्वान् एवं प्रकृति के सूक्ष्म द्रष्टा सफल महाकाव्य के प्रणेता हैं। जिनका महाकाव्य बृहत्त्रयी का प्रथम महाकाव्य है।

यह सत्य अवश्य है कि भारवि की रचना भावपक्ष की अपेक्षा कलापक्ष के अधिक सन्निकट है अतः भारवि के काव्य का रसास्वादन करने के लिये बुद्धि के सहयोग से परिश्रम करना आवश्यक है। भारवि की काव्यकला रससिक्त एवं माधुर्य गुण से ओत-प्रोत है परन्तु भारवि की काव्यकला का रसपान करने के लिये बुद्धि की आवश्यकता होती है। इनका काव्य नारियल के गोले के समान सुस्वादु एवं मधुर है परन्तु गोले के कठोर बक्कल के समान अर्थ गाम्भीर्य से युक्त है। जिस प्रकार नारियल फल के गोले को खाने के लिये पहले उसका कठोर बक्कल तोड़ना पड़ता है उसके बाद ही मधुर गोला खाने को प्राप्त होता है। उसी प्रकार भारवि की काव्यकला का रसास्वादन करने के लिये अर्थ-गाम्भीर्य रूपी बक्कल को बुद्धि के द्वारा तोड़ना पड़ेगा तभी भारवि की रचना का आस्वाद प्राप्त हो सकता है। जैसा कि प्रसिद्ध टीकाकार मल्लिनाथ ने कहा है कि—**नारिकेलफलसम्मितं वचो भारवेः सपदि तद् विभज्यते।**

स्वादयन्तु रसगर्भनिर्भरं सारमस्य रसिका यथेप्सितम् ॥

किरातार्जुनीयम्—भारवि की योग्यत परिचायक एकमात्र उनका महाकाव्य किरातार्जुनीय है। इसमें १८ सर्ग हैं। "किरातार्जुनीय" कथा का आधार "महाभारत" का "वनपर्व" है। किरातार्जुनीय के प्रथम-द्वितीय सर्ग में पाण्डवों की स्थिति "द्वैतवन" में बताई गई है। युधिष्ठिर के द्वारा प्रेषित वनेचर नामक गुप्तचर दुर्योधन की राज्य-स्थिति को जानकर द्वैत वन में लौटकर युधिष्ठिर से निवेदन करता है कि दुर्योधन पृथिवी को अपनी नीति से सदा के लिये अपने वश में करने का प्रयत्न कर रहा है। इसी समय द्रौपदी युधिष्ठिर की शान्ति नीति की भर्त्सना करती हुई युधिष्ठिर को युद्ध के लिये प्रेरित करती है। द्रौपदी के इस कथन का भीमसेन ने ओजस्वी भाषा में समर्थन किया और युद्ध करने की अपनी सम्मति प्रकट की परन्तु युधिष्ठिर विचलित नहीं हुये और उचित अवसर की प्रतीक्षा करने के लिये कहते हैं उसी समय व्यास जी वहाँ आ जाते हैं। तृतीय सर्ग में अर्जुन व्यास के परामर्श से पाशुपत अस्त्र को प्राप्त करने के उद्देश्य से शंकर को तपस्या से प्रसन्न करने के लिये इन्द्रकील पर्वत पर प्रस्थान करता है। चतुर्थ सर्ग से द्वादश सर्ग तक अर्जुन घोर तपस्या करते हैं, इन्द्र अर्जुन की तपस्या को भंग करने के लिये अनेक उपाय करता है। फिर प्रसन्न होकर इन्द्र अर्जुन को उपदेश देता है, अन्त में किरात वेषधारी शंकर का वर्णन किया गया है। त्रयोदशवें सर्ग से पञ्चदशवें सर्ग तक किरातवेषधारी शंकर और अर्जुन दोनों एक मायावी सूकर पर बाण छोड़ते हैं और उन दोनों में (किरात वेषधारी शंकर और अर्जुन में) परस्पर द्वन्द्व युद्ध होता है। अन्त के तीन सर्गों में अर्जुन की वीरता का वर्णन किया गया है और अन्त में प्रसन्न होकर भगवान् शंकर जी ने अर्जुन को आशीर्वाद देकर पाशुपत अस्त्र प्रदान किया हैं। अर्जुन भगवान् शंकर जी से विजय प्राप्ति का आशीर्वाद प्राप्त करके पाशुपत अस्त्र लेकर युधिष्ठिर के समीप चला आता है और युधिष्ठिर को प्रणाम करता है। यहीं महाकाव्य की समाप्ति हो जाती है।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि संस्कृत साहित्य के समालोचनात्मक इतिहास में भारवि को प्रथम स्थान प्राप्त है। बृहत्त्रयी में भारवि का महाकाव्य किरातार्जुनीय प्रथम महाकाव्य माना जाता है और बृहत्त्रयी के कवियों में भारवि को प्रथम महाकवि एवं राजनीति का प्रकाण्ड विद्वान् माना जाता है। महाकवियों के क्षेत्र में भारवि अर्थगौरव के लिये विशेष प्रसिद्ध एवं सम्मानित महाकवि हैं। ★

भारवि का जीवनवृत्त—भारवि के समय निर्धारण के समान उनके जीवनवृत्त के विषय में भी अनिश्चितता प्राप्त होती है तथा उनके जीवनवृत्त सम्बन्धी अनेक किंवदन्तियाँ प्रसिद्ध हैं। "अवन्तिसुन्दरी" कथा से उनके जीवन पर कुछ प्रकाश पड़ता है, परन्तु इसको कुछ विद्वान् प्रामाणिक नहीं स्वीकार करते हैं। अवन्तिसुन्दरीकथा के अनुसार दण्डी भारवि के प्रपौत्र थे। भारवि का जन्म कौशिक वंश में हुआ था। भारवि के पूर्वज गुजरात के आनन्दपुर नामक गाँव में रहते थे। वहाँ से नासिक होते हुए अचलपुर नामक गाँव में जाकर रहने लगे। भारवि के पिता का नाम नारायण स्वामी था, इसके अतिरिक्त अवन्तिसुन्दरीकथा से यह भी ज्ञात होता है कि भारवि का असली नाम दामोदर था। भारवि नाम तो उनका गुणकृत अथवा रचना के आधार पर प्रसिद्ध हुआ।

भारवि कोंकण के राजा अविनीत के पुत्र दुर्विनीत के मित्र थे। जिनके सम्पर्क में रहने के कारण भारवि का प्रारम्भिक जीवन प्रशंसनीय नहीं रहा। इससे भारवि को महान् कष्ट हुआ और फिर वे सिंह विष्णु वर्मा की सभा में सम्मानित होकर सिंह विष्णु वर्मा के राजसभा पण्डित एवं राजकवि के रूप में रहने लगे।

यदि अवन्तिसुन्दरीकथा के इस कथन को प्रामाणिक स्वीकार कर लिया जाय तो भारवि दक्षिण भारत के नासिक क्षेत्र के निवासी थे और उन्होंने अपने जीवन का अधिकांश भाग "काञ्ची" में ही व्यतीत किया था।

एक किंवदन्ती के अनुसार भारवि राजा भोज के समक लीन थे। इसके अतिरिक्त यह भी प्रसिद्ध है कि उन्होंने बहुत दिनों तक ससुराल में रहते हुए गायें भी चराई थी तथा धारा नगरी के निवासी थे। भारवि के पिता का नाम श्रीधर और माता का नाम सुशीला था। भारवि का विवाह भृगुकच्छ (भड़ौंच) निवासी चन्द्रकीर्ति की गुणवती कन्या रसिकवती अथवा रसिका के साथ सम्पन्न हुआ था। भारवि के पिता व्याकरण के प्रसिद्ध विद्वान् और साहित्यशास्त्र के अधिकारी ज्ञाता थे। भारवि तो अपने पिता से अधिक विद्वान् थे अतः उनको अहंकार हो गया था। पिता ने भारवि को बहुत समझावा परन्तु भारवि ने अपने अहंकारी स्वभाव को नहीं छोड़ा। भारवि के इस अहंकार को कम करने के लिये उनके पिता ने भारवि का प्रत्येक सभा में अपमान करना प्रारम्भ कर दिया इस पर भारवि ने अपने पिता का वध करने का निश्चय किया परन्तु कुछ समय के बाद भारवि को अपने पिता के वास्तविक रहस्य का पता लग जाता है तो वह पिता से क्षमा याचना करता है और उनकी आज्ञा से अपने पाप का प्रायश्चित करने के लिये ससुराल में ६ मास तक रहता है और गायें चराता है।

यह भी सुना जाता है कि किरातार्जुनीय नामक महाकाव्य का प्रारम्भ ससुराल में गाय चराते हुये ही कर दिया था। ससुराल में अधिक दिन रहने के कारण भारवि का ससुराल में अपमान होने लगा था। अधिक कष्ट से व्यथित पत्नी के कहने से भारवि ने किरातार्जुनीय महाकाव्य के निम्न श्लोक को गिरवी रखा था जिससे धन अर्जित करके पत्नी रसिकवती की इच्छाओं को पूर्ण किया था। वह श्लोक निम्न प्रकार देखा जा सकता है—